विषय-सूची

भाग १ : साधक से गुरु की भूमिका में

१

१.१ देह का अंत हुआ किन्तु वे अमर रहे ३
१.२ अंतिम भेंट
१.३ अदमनीय जीवन - एक महान संदेश
१.४ श्रेष्ठता के उग्र साधक
१.५ जादूगर तथा सृष्टिकर्ता का महान जादू

२

२.१ पवित्र दीक्षा - अदृश्य किन्तु अनुभवगम्य ११
२.२ आत्मा का उदार अनुभव
२.३ अनमनीय मन
२.४ शीर्षासन - एक सुखद अंग-विन्यास
२.५ साधना गहन होती गयी
२.६ कर्मनिष्ठ व्यक्ति

३

३.१ कार्य-कारण शृंखला के परे १९
३.२ गुरु - अपरिमेय

४

४.१ ज्ञानी गुरु की अनोखी शैली २७
४.२ ईश्वर प्रदत्त अवकाश
४.३ शिष्य के द्वारा गुरु का परीक्षण
४.४ विनम्रता - ज्ञान का परिचायक
४.५ प्रत्यक्ष अनुभव की शक्ति

५ ३३

५.१ पश्चाताप और सुधार
५.२ क्षितीश चन्द्र देव का सदा प्रोत्साहन
५.३ नया उद्योग - समयोचित चेतावनी
५.४ एक असामान्य परिव्राजक
५.५ अध्यात्म भागवतम् - पंचम पुरुषार्थ
५.६ युवा गुरु का प्रयाण
५.७ दीर्घ एकांतवास

६ ४७

६.१ शास्त्रीय ज्ञान का महत्त्व
६.२ देहधारी गुरु की आवश्यकता
६.३ स्वामी पुरुषोत्तम तीर्थ महाराज के दर्शन
६.४ पूर्णत्व की ओर

७ ५३

७.१ गुरु की भूमिका में
७.२ रहस्यमय ब्रह्मचारी
७.३ दुर्भाग्यकारी दुस्साहस
७.४ दुर्भाग्य से सौभाग्य
७.५ महान पद के लिए माहात्म्य आवश्यक है

८ ५९

८.१ मिश्रित भाव
८.२ स्वयंज्योति तीर्थ का आगमन
८.३ अत्याश्रमी - एक विशिष्ट आध्यात्मिक आयाम

भाग २ : बाबा के साहचर्य में

९

९.१ कलकत्ता से मेरा परिचय ६९

९.२ बाबा से पहली मुलाकात

९.३ बाबा द्वारा मेरे भाई की दीक्षा

९.४ 'चुराया हुआ' मंत्र

१०

१०.१ मेरी दीक्षा ७७

१०.२ तीव्र साधना काल

१०.३ चेतना - प्रधान तत्त्व

१०.४ विवेक की भूमिका

१०.५ यथासमय आवश्यक पुस्तक का उपलब्ध होना

१०.६ राजविद्या राजगुह्यम्

११

११.१ अनादि परंपरा ८९

११.२ कर्मकांड से परे

११.३ ज्ञान-साधना का सार

१२

१२.१ बाबा का हमारे गाँव के घर में आगमन ९७

१२.२ समाधि का अर्थ असंवेदनशीलता नहीं

१२.३ साधना का लक्ष्य आत्मज्ञानी, आत्मा नहीं

१३

१३.१ त्याग की तत्परता १०३

१३.२ उत्कृष्ट मार्गदर्शन

१४

१४.१ सन्न्यास का अर्थ अनंत विस्तार १११

१४.२ बाबा के द्वारा मेरे मनोरथ की पूर्ति

१५

१५.१ हमारा परिव्राजक जीवन १२१

१५.२ ज्ञानाश्रम में बाबा का आगमन

१५.३ ईश्वर इच्छा का पालन

१६

१६.१ नारायणाश्रम में हमारे तपस के दिन १३७

१६.२ जमशेदपुर की मेरी पहली यात्रा

१६.३ जमशेदपुर के भक्तों पर बाबा का अनुग्रह

१७

१७.१ जमशेदपुर का विशिष्ट योगदान १४५

१७.२ ज्ञानी का देहत्याग

१७.३ शाश्वत संदेश

१७.४ मेरी दक्षिणखण्ड की उपांत्य यात्रा

१८

१८.१ विदाई तथा अनपेक्षित उत्तरदायित्व १५५

१८.२ महासमाधि

१८.३ दीपा एवं अरूप

१८.४ एक असाधारण परंपरा

१८.५ उपसंहार

परिशिष्ट I १६३

परिशिष्ट II १६७

२

२.१ पवित्र दीक्षा - अदृश्य किन्तु अनुभवगम्य
२.२ आत्मा का उदार अनुभव
२.३ अनमनीय मन
२.४ शीर्षासन - एक सुखद अंग-विन्यास
२.५ साधना गहन होती गयी
२.६ कर्मनिष्ठ व्यक्ति

२.१ पवित्र दीक्षा - अदृश्य किन्तु अनुभवगम्य

बाबा की इच्छा थी कि वे भी उसी जगह दीक्षा लें, दक्षिणेश्वर काली मंदिर, पंचवटी में गंगा नदी के किनारे जहाँ श्री रामकृष्ण देव ने दीर्घ तपस्या की थी। तब तक श्री रामकृष्ण के जीवन और शिक्षा की ख्याति फैल चुकी थी। बाबा ने अपनी इच्छा क्षितीश चन्द्र को बतायी। दोनों दक्षिणेश्वर के लिए निकल पड़े जहाँ तोतापुरी, एक अवधूत सन्यासी, युवा रामकृष्ण से मिले थे और उन्हें ब्रह्मविद्या की दीक्षा दी थी एवं आत्म-साक्षात्कार कराया था।

वे दोनों दक्षिणेश्वर पहुँचे। हाथ-मुँह धो कर साधक और सिद्ध साथ बैठने के लिए तैयार हुए ताकि दीक्षा संस्कार किया जा सके। यह एक पवित्र एवं गहन प्रक्रिया है जिसमें साधक के शरीर, मन तथा हृदय में आध्यात्मिक तेज प्रज्वलित किया जाता है। इसके पश्चात आध्यात्मिक साधना का आरंभ होता है। दीक्षा की प्रक्रिया तथा इसके परिणाम अदृश्य किन्तु अनुभवगम्य होते हैं।

यद्यपि बाबा वैष्णव थे फिर भी उन्हें अनुभवगम्य आत्म-ज्ञान तथा आत्म-साक्षात्कार का कुछ ज्ञान था। उन्हें कोई शंका नहीं थी कि इस पवित्र एवं भव्य प्रक्रिया का साधक के लिए क्या महत्त्व होता है। साथ ही वे जानते थे कि आत्म-अनुभव की प्राप्ति के लिए एक प्रामाणिक गुरु से दीक्षा लेना कितना पवित्र और श्रेष्ठ होता है। वे यह भी समझते थे कि निष्ठावान शिष्य के लिए यह दीक्षाग्नि कितनी प्रबल होती है। रामकृष्ण देव और तोतापुरी की स्मृति ने उनके इस विचार को और अधिक प्रेरणात्मक बना दिया।

यह प्रक्रिया बाहरी दृष्टि से सरल थी। इसमें न तो कोई पूजा थी न ही यज्ञ था। कोई सामग्री भी अर्पण करने के लिए नहीं थी। भौतिक सामग्री और दृश्य पूजा केवल धार्मिक औपचारिकता होती है। किन्तु यहाँ तो सीधा संपर्क स्थापित किया जा रहा था - अपनी आत्मा से। आत्मा अज्ञात होती है जिसे ज्ञानी गुरु के द्वारा ही जाना जा सकता है। साधना की प्रगति साधक की लगन, उसकी निष्ठा तथा गुरु के माध्यम से होने वाली ईश्वरीय अनुकंपा पर निर्भर करती है।

गुरु की आज्ञा से शिष्य उस स्थान पर पवित्र वृक्ष के नीचे सुखासन में बैठे। उनके दोनों हाथ गूंथे हुए उनकी गोद में थे। क्षितीश चन्द्र ने कहा, "अपनी आँखें बंद कर परमात्मा का विचार करें। कोई विशेष आग्रह अथवा अपेक्षा न रखें। शांत एवं ग्रहणशील रहें। यदि इसमें कुछ अच्छा और पवित्र है तो उसे अपने भीतर प्रवेश करने दें और उससे जो प्रभाव आप चाहते हैं उसे होने दें।" शिष्य ने आँखें बंद कर ली।

अगले कुछ क्षण क्षितीश भाई गहरे मौन में रहे। पंचवटी के घने वन में गहन होते अंधकार में युवा गुरु ने अपने स्वयं के तेज से शिष्य के शरीर में अन्तरात्मा को जाग्रत करने का संकल्प जारी रखा। दीक्षा के लिए प्रत्येक गुरु या ज्ञानी अपनी एक अलग शैली रखते हैं। क्षितीश देव ने भी ऐसा ही किया। शरीर को ऊपर की ओर उठाकर अपनी हथेलियों पर खड़े हो कर उन्होंने घुटनों के पास से पैर कुछ मोड़ लिये। इससे वह मुद्रा सौम्य तथा आराम-दायी हो गयी। यह दृश्य अनूठा था।

बाबा ने अपने भीतर एक अजीब अन्तर्मुखीनता का अनुभव किया। जैसे जैसे समय बीतता जा रहा था यह भाव और प्रखर हो रहा था। एक रोमांच उनकी जाँघों से उठता हुआ छाती तथा सिर तक जा रहा था। यह अधिकाधिक बढ़ता ही गया। कुछ ही देर में वह बहुत अधिक बढ़ गया, पूरा शरीर उसमें तन्मय हो गया। परिणामी आनंद अत्यधिक था। वह अस्थिर मन को नियंत्रित करने में सक्षम था।

सारा परिवर्तन बाहरी निःशब्दता में हुआ जो अब अन्दर भी फैल रहा था।

यह एक अकल्पनीय घटना है, रहस्यमय जादू के समान जिसमें गुरु स्वयं अपने अन्तर से साधक के मन में साधना के बीज रोपित करते हैं। यह कैसे होता है? ऐसी व्यवस्था हमारे देश में कैसे बनी? कैसे सिद्ध पुरुषों और साधकों की एक लंबी परंपरा बन गयी? यह रहस्य ही रहेगा और जितनी बार इसकी पुनरावृत्ति होगी उतनी बार यह सत्य प्रमाणित भी होता रहेगा।

इस प्रकार बाबा का नया प्रेरणायुक्त जीवन शुरु हुआ जिसे आयु में उनसे छोटे पाठशाला के शिक्षक मित्र ने स्थापित किया था। बाबा ने अब तक इस मित्र की आदर से अधिक उपेक्षा ही की थी। क्षितीश चन्द्र के महान जादू में न शब्द था न करतब फिर भी वह बहुत ही मनोहर तथा अर्थपूर्ण था।

दोनों का हृदय कुछ देर के लिए एक हो गया। क्षितीश चन्द्र शीर्षासन से नीचे उतरे। उन्होंने देखा कि सदा परेशान करने वाला उनका मित्र मौन में है। यह देख उन्हें अच्छा लगा। उनके मुख पर तेज था, श्वास हल्की एवं लय-बद्ध थी। उन्हें शिष्य में भीतरी आनंद के लक्षण दृश्य हो रहे थे। प्रभाव दिखाई पड़ रहा था किन्तु कारण नहीं। गुरु को लग रहा था कि यद्यपि

उन्हें प्रतीक्षा करनी पड़ी किन्तु उनकी अपने जादूगर दादा संबंधी धारणा सत्य साबित हुई। धरती पर अपने उद्देश्य की पूर्ति हेतु यह एक महान संतोष का कारण था।

कुछ समय बीता। शीघ्र ही आकाश घने बादलों से घिर गया, वर्षा होने को थी। जैसे ही छींटे पड़ने लगे गुरु ने अपने शिष्य को जगाया ताकि वे ध्यान से बाहर आयें। अंतर में रम चुके बाबा के लिए यह इच्छा के विरुद्ध अवरोध था।

तब गुरु बाबा को निकट ही एक जर्जर मकान में ले गये और उन्हें आराम से बैठाया। उन्होंने बाहर से द्वार बंद कर दिया और फिर कुछ घंटों के बाद लौटे। जब उन्होंने द्वार खोला तो एक अभूतपूर्व दृश्य देखा। निरंतर स्पन्दन के कारण ऊर्जा तथा आनंद से भरा बाबा का शरीर अभी भी ध्यानमग्न था और उच्च आध्यात्मिक स्थिति के कारण उन्हें पसीना आ रहा था। अब उनकी ओर से कोई माँग न थी और न विरोध ही।

अपने शिष्य को उन्होंने दादा कहकर संबोधित किया और फिर चरण वंदना की। यह बंगाली परंपरा का एक भाग है जिसमें बड़ों से ऐसा व्यवहार किया जाता है। क्या आयु में बड़े बाबा अचंभित हुए? विनोद के साथ उन्होंने अपने छोटे भाई को आशीर्वाद देते हुए कहा, "आपका शिष्य शीघ्र ही ब्रह्मज्ञानी बने।"

सरलता भी अद्‌भुत है। जहाँ वह समृद्ध करती है, वहीं कभी कभी असमंजस में डाल देती है।

२.२ आत्मा का उदार अनुभव

उस दिन से क्षितीश भाई एवं उनके दादा के बीच विधिवत अटूट संबंध स्थापित हो गया। उस समय जो बादल इकट्ठे हुए थे उन्होंने भी बरस कर अपनी प्रसन्नता प्रकट की; इस प्रकार वे भी उस पूरी घटना के साक्षी बने।

अग्नि को मनुष्य ने विवाह संस्कार में अधिष्ठाता के रूप में स्थापित किया है। अग्नि की उपस्थिति में संपन्न विवाह पवित्र, सशक्त और ध्येय-पूर्ण हो जाता है। ये सभी गुण कालांतर में वैवाहिक जीवन को पोषित करते हैं, स्थिरता देते हैं विशेषकर तब जब दांपत्य जीवन में चुनौतियाँ आती हैं।

मनुष्य अपनी इच्छा से अग्नि तो प्रज्वलित कर सकता है किन्तु आकाश से वर्षा नहीं ला सकता! किसी महत्त्वपूर्ण कार्य में ऐसा होना मनुष्य के लिए सौभाग्य सूचक है, बहुत ही शुभ! उस दिन भी बाबा एवं क्षितीश चन्द्र के लिए ऐसा ही हुआ होगा!

जिस मार्ग पर बाबा अब चल पड़े और पहले जिस पर क्षितीश चन्द्र चले थे और उससे पहले परमहंस नारायण तीर्थ और उससे भी पहले गंगाधर परमहंस (नारायण तीर्थ देव के गुरु), यह एक लंबी, अनमोल परंपरा है। यह वह कुंजी है जिससे साधक स्वयं को जान

पाता है, अदृश्य ईश्वर को अनुभव कर पाता है जो कि सृष्टि तथा सृष्टिकर्ता के संबंध में अन्तर्तम सत्य है।

यदि भौतिक वस्तुएँ जो अधिकतर जड़ होती हैं, हमारे भीतर अनुभव, पसंद या नापसंद के भाव उत्पन्न करती हैं तो उन सब का आदि कारण कितना प्रभावशाली होगा? जिस आँख से हम बाहरी वस्तुओं को देखते हैं वह आँख अवश्य ही उन वस्तुओं से अधिक महान है, उसका गौरव और वैभव भी उन वस्तुओं से कहीं अधिक होगा!

हमारे शरीरस्थ आत्मा में वह क्षमता एवं शक्ति है जो बाहरी वस्तुओं तथा उनके घटकों से अनंत गुना अधिक है। जिनकी ऐसी विचारधारा होती है और जो इसे अपना चिर प्रयास बना लेते हैं वे परम सत्य के अनुग्रह का पात्र हो जाते हैं।

ऐसे व्यक्ति के लिए आत्मा शरीर से अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाती है। **सच्ची साधना व्यक्ति के विचार तथा क्रिया से शुरु होती है।** इससे पहले यह मात्र कही-सुनी बात होती है, एक धार्मिक अनुष्ठान, एक आध्यात्मिक कल्पना। बाबा का इस विषय में निश्चित विचार और व्यक्तिगत अनुभव था। इसलिए क्षितीश भाई से उन्हें जो भी मिला वे उससे संतुष्ट थे।

"इस कार्य के लिए मेरा क्षितीश भाई के पीछे पड़ना, हठ करना आज फलदायी हुआ है। मैं यही चाहता था। इस नये जादू में अधिक माधुर्य है, जैसा कि उन्होंने कहा था। अब मैं पूरी निष्ठा और विश्वास से इस साधना में लगूँगा तथा लक्ष्य पर पहुँचूँगा" - बाबा ने ऐसा विचार किया। लेकिन क्या यह विचार मात्र था या उसे जीवंत सत्य बनाने के लिए उनके पास सब कुछ था? अपने स्वाभाविक लगन तथा सच्चाई के कारण बाबा स्वयं को नियमित रूप से ध्यान एवं चिंतन में डुबो लेते। फलतः क्षितीश भाई से उनका संपर्क और निकट का हो गया, वह और पवित्र तथा उद्देश्यपूर्ण हो गया। क्षितीश भाई भी अपने शिष्य की निष्ठा देख प्रसन्न हुए।

२.३ अनमनीय मन

व्यक्तिगत जीवन संसार की तरह ही जटिल है। व्यक्ति का स्वभाव पृथ्वी के समान विविध एवं क्लिष्ट है। कई बार हमारा स्वभाव वैसे परिवर्तित नहीं हो पाता जैसा हम चाहते हैं। इच्छा होते हुए भी संकल्प की कमी रहती है या यदि संकल्प अच्छा हो तो इच्छा नहीं होती। इससे विसंगति पैदा होती है और व्यक्ति की उन्नति और लक्ष्य प्राप्ति में बाधाएँ आती हैं। कारण कई होते हैं, कई बार सूक्ष्म और पकड़ में न आने वाले। प्रत्येक व्यक्ति इसका अलग अलग स्पष्टीकरण देता है। कोई दैवयोग को तो कोई ईश्वर को दोष देता है। संभवतः जब मानवीय चरित्र का विज्ञान एवं उसकी पद्धति ठीक से समझी जायेगी तब यह रहस्य स्पष्ट हो पायेगा।

बाबा का आध्यात्मिक पथ तथा संकल्प उतना सरल और सीधा नहीं था जितना उन्हें पहले लगा था, विशेषकर अपने अंतिम जादू के कार्यक्रम के बाद। उनके गुरु महान थे। उनके गुरु का दीक्षा देने का तरीका भी अनूठा था। कई और संयोग भी थे जो दैववश कार्य कर रहे थे।

बाबा की आयु बढ़ रही थी। उनकी आध्यात्मिक जीवन की उन्नति, उतार-चढ़ाव, सुदिन-दुर्दिन भी साथ साथ चल रहे थे। फ़ैक्टरी में किया जाने वाला जादू अब उन्हें पसंद नहीं था। अब यह नया रहस्यमय जादू उन्हें और अधिक प्रिय लगने लगा। उनके सशक्त शरीर तथा मन के कारण साधना में उन्हें अनेक प्रकार के रोमांच, उत्तेजना तथा आकर्षण होते थे। इससे वे प्रसन्न होते।

शायद कुछ महीनों या वर्षों के बाद उन्होंने पाया कि उनका आध्यात्मिक संकल्प क्षीण हो रहा है और भौतिक आकर्षण बढ़ रहा है। उस समय क्षितीश भाई में भी उनकी रुचि कम हो गयी। कभी-कभी गाँव की सड़कों से निकलते हुए यदि उनके गुरु सामने पड़ जाते तो बाबा मुँह फेर कर सीधे चले जाते, मानो गुरुदेव को पहचानते न हों।

जब वे मुझे यह प्रसंग बता रहे थे तो मैंने उनकी आँखें नम होते देखी और रुँधती आवाज सुनी। मैंने कुछ और नहीं पूछा, किसी और उत्तर या टिप्पणी की आवश्यकता नहीं थी। मानव मन कभी-कभी बिलकुल अनमनीय हो जाता है, कठोर हो जाता है। उस व्यवहार को किसी भी तरह समझा नहीं जा सकता। इसमें भी उस मन की अपनी एक महानता या श्रेष्ठता होती है।

२.४ शीर्षासन - एक सुखद अंग-विन्यास

कुछ समय बाद उदासीनता की स्थिति बदल गयी और उनकी आध्यात्मिक अभिलाषा फिर से प्रबल हो गयी। वे फिर से गहन साधना करने लगे। तब तक उन्हें ध्यान के लिए शीर्षासन में रहने की आदत होने लगी थी। सामान्यतः आसनों के अपने नियम होते हैं। योग गुरु तथा विद्वानों के नियम सबंधी विभिन्न मत हैं। प्रत्येक आसन का अपना एक महत्त्व है, मन और शरीर पर उनका प्रभाव भी अलग अलग होता है।

आसनों का एक निश्चित क्रम एवं अवधि भी है। किन्तु 'बाबा आसन' जो मैंने देखा और सुना ऐसे किसी नियम के अधीन नहीं था। "शीर्षासन सभी आसनों का राजा है इसलिए इसे शीर्षासन कहते हैं"- यह बाबा का कथन होता था।

जैसा मैंने पहले कहा, उनके गुरु अधिकतर हाथ के बल पर खड़े रहते और बाबा का भी अधिकांश समय शीर्षासन में ही बीतता था। जब से मैंने बाबा को जाना उन्हें दिन भर इसी

आसन में पाया। सुबह सबेरे स्नान से पहले, भोजन के बाद, मध्याह्न में, दोपहर में, संध्या में, रात्रि में - चौबीस घंटे इसी आसन में रहना उनके लिए स्वाभाविक सा था।

शीर्षासन साधक के भावावेग को नियंत्रित करने में सहायक होता है। सतत शारीरिक कार्य करने की इच्छा, संसार के प्रति आसक्ति घट जाती है और साधक अन्तर्मुखी हो जाता है। साधक बंद कमरे की साधना से संतुष्ट होने लगता है। कई बार युवा साधक की शक्ति तथा अच्छा स्वास्थ्य व्याकुलता बढ़ाने का कार्य करते हैं। अन्यथा युवा साधक की शक्ति और अच्छा स्वास्थ्य उसे पथभ्रष्ट कर देते हैं। शीर्षासन से यह शारीरिक तथा मानसिक उद्वेलन कम हो जाता है।

मस्तिष्क तथा रीढ़ में विशेष तरंगों की निर्मिती के कारण ऐसा होता है। इन स्थानों में रोमांचकारी अनुभव एवं अनोखे आनंद प्राप्त होते हैं। कई बार शरीर का वजन तथा गुरुत्वाकर्षण का प्रभाव आश्चर्यजनक स्तर तक घट जाता है। बहुत विस्तार एवं आकाशगामिता का अनुभव होता है। कभी कभी शारीरिक परिमाण बिलकुल छूट जाते हैं और उनकी जगह विचित्र मानसिक विस्तार का अनुभव होता है। शीर्षासन में साधक को ऐसा लगता है कि वह अपने शरीर के एक बिंदु पर खड़ा है और पृथ्वी से उसका संबंध बिलकुल समाप्त हो गया है। और भी अनेक आध्यात्मिक अनुभव शीर्षासन से आते हैं। बाबा से भेंट के बाद जब शीर्षासन में मेरी रुचि बढ़ी तो मैंने उनसे पूछा, "इस संबंध में अलग नियम हैं क्या?" उनका उत्तर था, "नहीं, हमारी परंपरा में नहीं। जो भी स्वाभाविक होगा, जो भी आवश्यक होगा स्वतः ही घटेगा और तुम्हें आगे ले जायेगा।"

वैसे शीर्षासन में रहते हुए बाबा अनेक श्लोकों तथा मंत्रों का उच्चारण करते, यदा कदा अपना सितार भी बजाते। यह मैं इसलिए नहीं कह रहा हूँ कि यह आध्यात्मिक श्रेष्ठता का कौशल है वरन् इसलिए कि यह बाबा के निराले व्यक्तित्व के पक्ष का एक निरूपण है।

२.५ साधना गहन होती गयी

विनयशीलता आध्यात्मिक ज्ञान एवं पूर्णता की निश्चित पहचान है। यद्यपि क्षितीश भाई उनके गुरु थे फिर भी वे अपने दादा, अपने आध्यात्मिक पुत्र, के आगे सदैव नम्र बने रहते थे। बाबा को दिये गये वचन और स्वयं की गुरु-भक्ति के कारण वे बाबा को ज्ञान-साधना मठ, फ़रीदपुर अपने गुरुदेव परमहंस नारायण तीर्थ के पास ले गये। उनके महान गुरुदेव ने अपने युवा शिष्य के वृद्ध शिष्य का स्वागत किया। वे दोनों कुछ दिन आश्रम में रहे। वहाँ बाबा को गहरी अन्तर्दृष्टि अवश्य प्राप्त हुई होगी ।

नयी ऊर्जा और प्रेरणा के साथ बाबा दक्षिणखण्ड लौट आये। जिस नये मार्ग पर तथा जिस लक्ष्य की ओर वे जा रहे थे अब और स्पष्ट हुआ। इसके अतिरिक्त मैंने बाबा का नारायण

तीर्थ से किसी और संपर्क के बारे में नहीं सुना। उनसे केवल नारायण तीर्थ देव की स्वयं की आध्यात्मिक साधना के संबंध में अवश्य ही मैंने सुना था।

बाबा घर पर गहन साधना कर रहे थे। वे फ़ैक्टरी में भी काम कर रहे थे। एक बार फ़ैक्टरी में काम करते समय उन्हें एक विचित्र अनुभव हुआ, जो उनके अन्तरात्मा से उत्पन्न था। उससे उत्पन्न असामान्य आनंद में बाबा ने अपने शरीर की सुध-बुध भुला दी। वे चलती हुई मशीन पर गिर पड़े। भाग्यवश वे मशीन के पट्टे से टकरा कर बाहर की ओर गिर पड़े अन्यथा वे मशीन के चक्के और पाट के बीच में पिस जाते।

कई घंटों तक उन्हें कुछ पता न चला। उन्हें घर ले जाया गया। शाम तक उन्हें होश आया। यह पूरा किस्सा उन्हें सहकर्मियों के द्वारा बताया गया। मगर उन्हें वह निद्रा समान प्रतीत हुआ, जैसे वह अभी अभी जागे हों। "प्रत्येक खतरे की अवस्था में बचाव की एक बारीक रेखा होती है। खतरा आता है और चला भी जाता है। कार्य और कारण दोनों उस एकमेव गूढ़ प्रारब्ध द्वारा ही किये जाते हैं। पीड़ा देना और दवा देना दोनों उसी का कार्य है"- यह बाबा ने कहा।

२.६ कर्मनिष्ठ व्यक्ति

इसके बाद बाबा की आध्यात्मिक इच्छा और प्रबल हो गयी। वे घंटों ध्यानस्थ रहते। बाबा कारखाने में उच्च पद पर थे और उच्च अधिकारियों के द्वारा पसंद किये जाते थे। इसीलिए कर्मचारीगण उनसे भाँति भाँति के लाभ पाने के लिए उत्सुक रहते थे।

घर पर वे साधना के लिए जैसा चाहते थे वैसा समय नहीं निकाल पाते थे। घर पर कोई न कोई आता ही रहता था। कुछ लोग उनका बहुत समय लेते संभवतः अपना समय भी बर्बाद करते। बाबा को यह बुरा लगता था। अब मार्ग क्या था? कैसे वे आगंतुकों को मना करते? शिष्टाचार के नाते धैर्य तथा मित्र-भाव आवश्यक था।

तथापि बाबा को अपने एवं आगंतुकों के समय की बर्बादी को बचाना तो था। इसलिए बाबा ने कुछ नियम बनाये और एक तख्ते पर बड़े अक्षरों में लिख कर आगंतुकों के बैठने के स्थान के ठीक सामने लगा दिया। वह तख्ता जो आज भी दक्षिणखण्ड में है, इस प्रकार है:

कर्म-निष्ठ व्यक्ति के पास जाकर
अपनी हेतु की बात करें
अपनी बात समाप्त कर
कर्म-निष्ठ व्यक्ति को
अपने कर्म करने के लिए छोड़ दें

इस युक्ति से काम बन गया। कई मित्र इससे प्रभावित हुए। उन्होंने सीख ली और आगे से समय का सही नियोजन करने लगे। बाबा को राहत मिली तथा अपने कर्म के लिए अधिक समय भी।

***